IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 28, Issue 7, Series 1 (July. 2023) 75-77
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

बिहार की राजनीति में सामाजिक न्याय से जुड़े तथ्यों का क्रियान्वयन

सारंग तनय
शोध छात्र, राजनीति शास्त्र विभाग, बी. एन. एम. यू. मधेपुरा, बिहार

सार

इतिहास इस बात का साक्षी है कि बिहार बहुत ही लंबे समय से राजनीति के केंद्र में रहा है। इसे इसी तथ्य से समझा जा सकता है कि पिछले सात दशकों में भारत में जो महत्त्वपूर्ण राजनीतिक बदलाव हुए हैं, बिहार की धरती उसकी जननी रही है। 1990 के दशक में बिहार न केवल मंडल–समर्थक और मंडल–विरोधी आंदोलन के केंद्र में था, 1975 में वह आपातकाल–विरोधी आंदोलन का भी केंद्र रहा जो "जेपी आंदोलन' के नाम से जाना जाता है और जिसका नेतृत्व जयप्रकाश नारायण ने किया था जब तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी ने देश में आपातकाल लागू कर दिया था। यह बताना जरूरी है कि ब्रिटिश शासन के दौरान भी बिहार ने राजनीतिक बदलाव लाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। हमारे इतिहास की पुस्तकों में जिसे चंपारण आंदोलन के नाम से जाना जाता है, नील की खेती करने वाले किसानों के शोषण के खिलाफ यह आंदोलन महात्मा गांधी ने 1917 में बिहार के चंपारण से शुरू किया जो कि बिहार के उत्तर–पूर्व में स्थित एक जिला है।

विस्तार

मंडल–दौर के बाद देश के उत्तरी राज्यों में जिस तरह की राजनीतिक लड़ाई और राजनीतिक प्रतिनिधित्व की शुरुआत हुई उसकी गहरी जड़ें बिहार में ही थीं।

देश के अन्य राज्यों की तरह ही, अतीत में बिहार की राजनीति में मुख्यतः काँग्रेस का दबदबा रहा है। बिहार में कई दशकों तक काँग्रेस का निर्बाध शासन रहा और यह 1990 तक जारी रहा। इस बीच सिर्फ पांच बार जब राज्य में कुछ समय के लिए गैर–काँग्रेसी शासन रहा। पर मंडल–आंदोलन के बाद की स्थिति ने राज्य की राजनीति की दिशा और दशा बदल दी चुनावी राजनीति और राजनीतिक प्रतिनिधित्व अब पहले जैसे नहीं रहे। इस दौर में क्षेत्रीय राजनीतिक पार्टियों का उदय हुआ और व्यापक जनाधार वाले क्षेत्रीय नेता भी सामने आए, विशेषकर समाज के निचले तबके, जैसे अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी), दलित, आदिवासी (अविभाजित बिहार में) और मुस्लिमों में। मंडलोत्तर राजनीति ने राज्य में काँग्रेस के अवसान की शुरुआत कर दी। राज्य में मंडल आंदोलन के बाद पहला विधानसभा चुनाव 1995 में हुआ और उसके बाद से राज्य में काँग्रेस का जनाधार निरंतर गिरा है, चुनाव दर चुनाव, और आज 125 साल से ज्यादा पुरानी इस पार्टी का राज्य में राजनीतिक वजूद नगण्य हो गया है।

बिहार में मंडलोत्तर राजनीति की शुरुआत 1990 के दशक में राष्ट्रीय पार्टी के रूप में स्थापित काँग्रेस बनाम नवोदित पार्टी से हुई और यह नवोदित पार्टी थी जनता दल (जद)। पर आज यह राजनीतिक लड़ाई इसी जनता दल के दो फाड़ हुए धड़ों, राष्ट्रीय जनता दल (राजद) और जनता दल यूनाइटेड (जदयू) जैसी दो प्रभावशाली क्षेत्रीय राजनीतिक पार्टियों के बीच सिमट गई है जबकि दो राष्ट्रीय राजनीतिक पार्टियां, काँग्रेस और भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) दोनों ही क्षेत्रीय दलों की सहयोगियों के रूप में सहायक की भूमिका में हैं।

हालांकि, कभी कभार राजद के साथ गठबंधन करने वाली काँग्रेस भी राज्य में कुछ चुनाव अपने दम पर लड़ी है। भाजपा और नीतीश कुमार के नेतृत्व में जदयू 1996 के लोकसभा चुनावों के बाद राज्य में टिकाऊ गठबंधन करने में कामयाब रहे। अन्य क्षेत्रीय राजनीतिक पार्टियां जैसे राम विलास पासवान के नेतृत्व वाली लोक जन शक्ति पार्टी (एलजेपी), वामपंथी पार्टियां जैसे मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी (माकपा), भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (भाकपा), भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी–लेनिनवादी) (भाकपा–माले) और कुछ अन्य छोटी क्षेत्रीय राजनीतिक पार्टियों ने पिछले तीन दशक की चुनावी राजनीति में अपना योगदान दिया है। ये छोटी क्षेत्रीय पार्टियां सामान्यतया मामूली भूमिका अदा करती हैं, पर कई बार राज्य की चुनावी राजनीति में इन्होंने बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिकाएं भी निभाई हैं। फरवरी 2005 में हुए विधानसभा चुनावों में किसी भी पार्टी को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला और लोजपा द्वारा ज्यादा सीटें जीतने वाली किसी बड़ी पार्टी को समर्थन नहीं देने की वजह से राज्य में अक्तूबर 2005 में दुबारा चुनाव हुआ। इस बार राज्य में सत्ता बदल

गई। भाजपा से गठजोड़ कर दूसरी बार नीतीश कुमार बिहार के मुख्यमंत्री बने। मंडलोत्तर राजनीति के तीन दशक की इस अवधि के दौरान बिहार की राजनीति में कई तरह के उतार–चढ़ाव आए हैं। इस कड़ी में एक उतार–चढ़ाव जुलाई 2017 में उस समय आया जब नीतीश कुमार ने राजद के साथ महागठबंधन को तोड़ दिया और सरकार से इस्तीफा दे दिया पर 24 घंटे के अंदर ही भाजपा से गठजोड़ कर पुनः मुख्यमंत्री के रूप में सत्ता पर काबिज हो गए। यहाँ यह गौर करना जरूरी है कि नीतीश कुमार ने 2015 का चुनाव राजद और कॉंग्रेस के साथ मिलकर लड़ा था जो कि अपने आप में एक असामान्य गठबंधन था। बिहार की राजनीति के दो धुर विरोधी, नीतीश कुमार और लालू प्रसाद साथ आए और 'महागठबंधन' बनाया उनका एकमात्र उद्देश्य बिहार में भाजपा को चुनाव जीतने से रोकना था। यह महागठबंधन 2015 का चुनाव जीतने में सफल रहा और उसने भाजपा और उसकी सहयोगी पार्टी लोजपा एवं राष्ट्रीय लोक समता पार्टी (आरएलएसपी) को हराकर राज्य में सरकार का गठन किया पर यह सरकार अल्पजीवी साबित हुई। नीतीश कुमार ने उपमुख्यमंत्री तेजस्वी यादव व राजद के अन्य नेताओं पर भ्रष्टाचार के आरोपों और उनके खिलाफ सीबीआई के छापे के कारण महागठबंधन को तोड़ दिया। नीतीश कुमार ने भ्रष्टाचार के प्रति कोई हमदर्दी नहीं दिखाने का दिखावा किया पर वे अंततः उसी पार्टी के समर्थन के साथ सरकार में वापस आए जिस पर उन्होंने 2015 के विधानसभा चुनाव के दौरान सांप्रदायिक होने का आरोप लगाया था। अगर चुनाव से पहले लालू प्रसाद और कॉंग्रेस के साथ मिलकर नीतीश कुमार का 'महागठबंधन' बनाना लोगों को अस्वाभाविक लगा था तो उसी भाजपा के साथ मिलकर उनका सरकार बनाना भी लोगों को अजीब लगा जिसके खिलाफ चुनाव में उन्होंने बिहार की जनता का समर्थन हासिल किया था।

किसी भी राज्य की राजनीति उसके समाज और उसकी अर्थव्यवस्था के बीच संबंधों की देन होती है। बिहार के सामाजिक और आर्थिक इतिहास की समझ पिछले कई दशकों में इसकी चुनावी राजनीति की बदलती प्रकृति को समझने में मदद करेगी। जब बिहार अविभाजित था और झारखंड भी इसका हिस्सा था, उस समय राज्य मुख्य रूप से तीन क्षेत्रों में विभाजित था, उत्तरी बिहार, मध्य बिहार और दक्षिण बिहार। बिहार से झारखंड के अलग होने के बाद समाजिक, सांस्कृतिक और राजनीति भिन्नताओं के आधार पर राज्य का एक नया भौगोलिक वर्गीकरण किया गया। यद्यपि यह वर्गीकरण मूलतः सांस्कृतिक है, इनका प्रयोग राजनीतिक अनुस्थापनों के अध्ययन के लिए भी होता है। हर क्षेत्र अपनी विशिष्ट सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों के अनूठे सम्मिश्रण को प्रदर्शित करता है और इनकी भाषा और बातचीत का लहजा एक–दूसरे से अलग है। राज्य की राजनीति में जाति एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। किसी जमाने में ऊंची जातियों की वर्चस्व वाली राजनीतिक संरचना के लिए जाने वाले बिहार में मंडलोत्तर राजनीति ने प्रभावशाली मध्य जातियों जैसे आम तौर पर ओबीसी और विशेषकर यादवों को बिहार की राजनीति के केंद्र में ला दिया। बिहार के मतदाताओं में यादवों और मुसलमानों की संख्या काफी अधिक है। कटिहार, दरभंगा, पूर्णिया, सीवान और कुछ अन्य जिलों में मुसलमानों की अच्छी खासी उपस्थिति का परिणाम यह निकला है कि राजनीतिक पार्टियां मुसलमानों को वोट बैंक की तरह देखने को मजबूर हुई हैं। कुछ राजनीतिक पार्टियां मुस्लिमों को वोट बैंक समझकर ही लामबंदी करती हैं।

भारतीय चुनावी इतिहास में इस अवधि को कॉंग्रेस काल कहा जाता है, इसके बावजूद कि इसकी निरंतरता में संक्षिप्त व्यवधान उपस्थित हुए। देश में पहली बार बिहार सहित कई राज्यों में गैर–कॉंग्रेसी सरकार की स्थापना हुई। आजादी के बाद के बिहार के राजनीतिक इतिहास पर नजर दौड़ाने से इसके तीन भिन्न चरणों का पता चलता है। इसका पहला चरण (1947–1967) कॉंग्रेस के वर्चस्व का काल है जब ऊंची जातियाँ इसकी सत्ता–संरचना के शीर्ष पर बैठी दिखती हैं। दूसरा चरण (1967–1990) को संक्रमण काल कहा जा सकता है जब राजनीतिक क्षेत्र में कॉंग्रेस के साथ–साथ ऊंची जातियों के प्रभुत्व में आ रही क्रमशः गिरावट और इसके साथ ही मध्य जातियों के धीमे किन्तु निरंतर उभरते प्रभाव को देखा जा सकता है। तीसरा चरण (1990 और उसके बाद) प्रथम चरण का पूर्ण विपर्यय है जिसमें कॉंग्रेस पार्टी और ऊंची जातियाँ राज्य की राजनीति में हाशिये पर चली जाती हैं।

1990 का दशक बिहार सहित कई राज्यों में क्षेत्रीय दलों के राजनीतिक प्रभुत्व की शुरुआत का है। 1989 के लोकसभा चुनावों में जीत के बाद वीपी सिंह के प्रधानमंत्री बनने के बाद बिहार में ओबीसी राजनीति की शुरुआत का संकेत भी यह देता है। वीपी सिंह के प्रधानमंत्री बनने के बाद राज्य में पहला विधानसभा चुनाव 1990 में हुआ। 1990 के विधानसभा चुनावों के बाद राज्य में काफी दिनों बाद गैर–कॉंग्रेसी सरकार का गठन हुआ और लालू प्रसाद यादव प्रथम बार राज्य के मुख्यमंत्री बने। जनता दल की इस जीत ने बिहार में कॉंग्रेस के लंबे शासन का अंत कर दिया। 1990 के विधानसभा चुनावों में हारने के बाद कॉंग्रेस के हाथ से न केवल बिहार की सत्ता गई, बल्कि इस पराजय ने कॉंग्रेस के व्यवस्थित पराभव की शुरुआत भी कर दी। 1995 के विधानसभा चुनावों ने लालू प्रसाद यादव के नेतृत्व में जद के प्रभुत्व को और ज्यादा स्थापित कर दिया और बहुतों की अपेक्षाओं के विपरीत पार्टी ने अपने दम पर पूर्ण बहुमत हासिल किया। राज्य में भाजपा के समर्थन का सीमित आधार, कॉंग्रेस के निरंतर घटते जनाधार और नीतीश कुमार की जनता दल से विदाई के बाद लालू प्रसाद यादव के नेतृत्व में जनता दल ने 1995 के विधानसभा चुनावों में भारी बहुमत से विजय

हासिल की। नीतीश कुमार ने जनता दल से नाता तोड़कर अलग समता पार्टी का गठन किया। मंडलोत्तर काल में हुआ यह पहला चुनाव था जिसमें चुनावी लड़ाई में मुख्यतः ओबीसी ही ओबीसी के खिलाफ थे।

शेष जाति के मतदाताओं के व्यवहार के बारे में किसी व्यापक सूक्ष्म सिद्धान्त के प्रतिपादन की अनदेखी की गई है ताकि मतदान के तरीकों की चेतनता और इसकी क्षणिकता को किसी तरह के दर्जे में फिट होने का मामला न बनाया जाए। उदाहरण के लिए, यह आम तौर पर माना जाता है की मुस्लिम राजद के प्रबल समर्थक रहे हैं, 1995 और 2005 के बीच हुए चुनावों में राज्य में राजद और मुस्लिम मतदाताओं के बीच संबंधों में भी बदलाव आया। अगर 2009 का लोकसभा चुनाव राजद और उसके नेता लालू प्रसाद यादव को बहुत ही शक्तिशाली झटका दिया, तो 2010 के विधानसभा चुनावों ने उन्हें और भी शर्मसार किया। इन चुनावों में उनके लिए मतदान करने वाले लोगों की संख्या में भारी कमी आई और उनको सीट भी काफी कम मिले। कई पर्यवेक्षकों ने तो यहाँ तक कहना शुरू कर दिया था कि मतदाताओं ने लालू प्रसाद यादव के सामाजिक न्याय की राजनीति को अब नकार दिया है और अब उन्होंने नीतीश कुमार के विकास पर आधारित मॉडल में अपना विश्वास जता दिया है।

पिछले कुछ सालों में बिहार की राजनीति में आए बदलाव का विश्लेषण किया गया है। इसमें लोजपा और रालोसपा के साथ भाजपा के गठबंधन का विश्लेषण किया गया है जिसके कारण भाजपा को 2014 में भारी विजय मिली और इसी गठबंधन को अगले साल 2015 में हुए विधानसभा चुनावों में मुंह की खानी पड़ी और फिर किस तरह नीतीश कुमार अपने गठबंधन के साथी राजद को बदलकर भाजपा के साथ दुबारा सत्ता में आ गए। 2014 के लोकसभा चुनावों ने जदयू और भाजपा के बीच दशकों से चले आ रहे गठबंधन का अंत कर दिया दूसरा, भाजपा को जो जनादेश मिला वह पिछले कुछ दशकों में राष्ट्रीय स्तर पर किसी भी पार्टी को मिले जनादेश में सबसे ज्यादा स्पष्ट था और अंत में, बिहार में चुनाव जीतने के लिए जो गठबंधन बना उसमें ऐसे दल शामिल थे जिनका एकसाथ आना बड़ी बात थी। नीतीश के साथ अपनी सफल साझेदारी से बाहर निकलते हुए भाजपा ने राम विलास पासवान के लोजपा और उपेंद्र कुशवाहा के रालोसपा से हाथ मिलाया और इस गठबंधन ने बिहार में लोकसभा की 40 में से 31 सीटों पर कब्जा कर लिया। 2014 के लोकसभा चुनावों के परिणाम के बारे में यह कहा गया कि यह जातिवादी गठबंधनों पर विकास की राजनीति की जीत है।

एक अन्य ऐतिहासिक चुनाव बिहार विधानसभा चुनाव 2015 की। यह चुनाव बिहार में भाजपा के विजय रथ को रोकने में कामयाब रहा और बिखर रहे विपक्ष में आशा का संचार किया। महागठबंधन की सफलता के कई कारण थे जिसकी वजह से महागठबंधन भाजपा पर भारी पड़ा। जाति ने एक बार फिर इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई ।

सन्दर्भः

1. आशा कौशिक, नारी सशक्तिकरण एवं स्वार्थ प्वाइंट, पब्लिक सर्च, जयपुर।
2. अतुल कोहली, लखित डेमोक्रेसी एंड डिस्कॉम बेटर, इंडिया आज, गोइंग क्राइसिस ऑफ गवर्नमेंट, लिटी, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैंब्रिज ।
3. मधु किश्वर, ऑफ द ब्रिटेन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू दिल्ली 1999
4. निरोध सिन्हा, वूमेन इन इंडियन पॉलिटिक्स, ज्ञान पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली 2000।
5. अतुल कोहली, द स्ट्रेक्चर ऑफ इंडियाज डेमोक्रेसी, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली 2008 ।